निवेदन

'गंगाजली' और 'वल्कल' को माला मे 'पंचवटी' को जोड़ते हुए मुझे हर्ष तो हो ही रहा है, सन्तोष भी हो रहा है। विश्वास है साहित्य-जगत मे 'पञ्चवटी' अपना स्थान प्राप्त करेगी। इसके बाद इसी माला मे पाठक 'पर्णकुटी' की प्रतीक्षा करे।

बीकानेर — सकसेना

वसंतपञ्चमी १९९८.

सूची

गोस्वामी तुलसीदास की

स्मृति को

हठ

नट
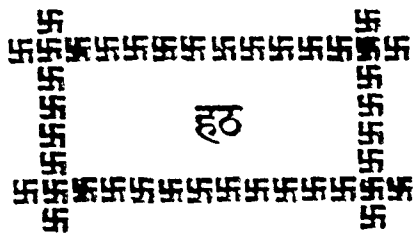
राम	अयोध्या के राजा दशरथ के बेटा
कौशल्या	राम की माता
सीता	राम की स्त्री
माण्डवी	राम के भाई भरत की स्त्री
उर्मिला	राम के छोटे भाई लक्ष्मण की स्त्री

दासी आदि

अयोध्या का राजमहल

सूर्योदय से पूर्व

रेशमी वस्त्र पहने सीता इधर से उधर फिर रही हैं। जो कोई मिल
जाता है उसे आदेश देती है। घर की दासियाँ भी काम में
लगी हैं। भीतर से एक दासी आती है।

दासी

स्वामिनी, माता कौशल्या ने कहलाया है कि आप रात भर जागती रही हैं। थोड़ा विश्राम कर लें।

सीता

माताजी ने कौन आँख लगा ली है? वे भी तो जागती रही हैं।

दासी

आपको अभी अभिषेक के कार्य में बैठना होगा।

सीता

जानती हूँ; पर अभी कितने काम पड़े हैं।

दासी

हम लोगों को पता दीजिये। हम कर लेंगी।

सीता

अवश्य, लेकिन मेरा रहना तो जरूरी है।

दासी

आपका एक बार आदेश ही काफी है।

सीता

अच्छा देखो, अभिषेक के लिए आवश्यक सामग्री पहुँच गई है। केवल तीर्थजल, दूर्वा, रोली और अञ्जन भेजने शेष हैं।

दासी

जो आज्ञा।

सीता

और सुनो। देखो, आर्यपुत्र गुरु वशिष्ठ का आशीर्वाद पाकर ज्यों ही आयें त्यों ही मुझे बताना।

[जाने का नाट्य

दासी

जो आज्ञा।

सीता

(लौटकर) देखो, अभिषेक के समय पहनने के लिए आर्य पुत्र के वस्त्र कहाँ रक्खे हैं, तुम्हें मालूम है। देवर लक्ष्मण जिस समय माँगें तुरन्त दे देना।

दासी

जो आज्ञा।

सीता

मांडवी, उर्मिला और श्रुतिकीर्ति को कहला दो कि वे ज़रा मुझसे अभी आकर मिल लें। पीछे निमंत्रित महिलाएँ आने लग जायँगी।

दासी

जो आज्ञा।

सीता

नहीं ठहरो। उन्हें मेरे पास मत बुलाओ। केवल इतना कहला दो कि देवी अरुन्धती के आसन के पास ही माता कौशल्या का आसन रहेगा। मझली माँ से मैंने पुछवाया है। ज्ञात होने पर कहला दूँगी।

[जाने को होती है

दासी

जो आज्ञा।

सीता

एक बात और। देखो, द्वार से कोई याचक खाली हाथ लौटकर न जाय। जो कोई जो कुछ माँगे, उसे वही दिया जाय।

[प्रस्थान, दासी अन्य दासियों को बुलाकर ऊपर की सारी आज्ञाएँ समझाती और उन्हें एक-एक कर भेजती है। उर्मिला का प्रवेश।

उर्मिला

जीजी, तो यहाँ भी नहीं। मैं कब की ढूँढ रही हूँ पर आज उनका पता ही नहीं लगता।

दासी

(हाथ जोड़कर) स्वामिनी, अभी अपने मंदिर में गई हैं। आज रात भर एक पल को भी विश्राम नहीं किया।

उर्मिला

विश्राम कैसे कर पातीं ? उन्हें विश्राम का समय कहाँ है ?

दासी

आप उनके पास जायँगी ?

उर्मिला

नहीं। अब वे गई हैं तो उन्हें थोड़ा चैन ले लेने दें।

दासी

स्वामिनी ने याचकों का मुहँ-माँगा दान देने तथा देवी अरुन्धती के पास ही माता कौशल्या का आसन रखने का आदेश दिया है।

उर्मिला

ऐसा ही किया गया है।

[एक ओर से उर्मिला और दासी का आगे-पीछे प्रस्थान। दूसरी ओर से सीता का प्रवेश।

सीता

सूर्य भगवान् अपने वंश का यह महोत्सव देखने के लिए कैसे सुसज्जित होकर आ रहे हैं ! बादलों की ऐसी शोभा तो मैं आज पहली ही बार देख रही हूँ । उदयाचल के शिखर पर आज किसी ने वंदनवारें बाँध दी हैं !

[माण्डवी का प्रवेश

माण्डवी

जीजी, आज आपको कोई काम नहीं करना है ।

सीता

(हँसकर) क्यों ? क्या माता कौशल्या का आदेश है ?

माण्डवी

नहीं, देवी अरुन्धती ने कहलाया है कि आप बहुत व्यस्त हो रही हैं । थक जायँगी ।

सीता

और तुम मान लेती हो । तुम बड़ी भोली हो माण्डवी !

माण्डवी

(मुस्कराकर) देवी अरुन्धती स्वयं वृद्ध हैं । इसलिए ऐसा समझती हैं ।—पर जब उन्होंने कहा तो मैं क्या करती ?

सीता

(हँसती हुई) अच्छा जाकर कह देना कि उनकी आज्ञा शिरोधार्य है ।

माण्डवी

जीजी !

सीता

कहो ।

माण्डवी

जीजी, आज—(रुक जाती है ।)

सीता

कहो, बहिन मांडवी, कहो ।

माण्डवी

आज का दिन कितना धन्य है ! कितना सुहावना है, जीजी !

सीता

हाँ बहिन । सब मुझसे कहते हैं आराम करो, विश्राम करो । काम मत करो । परिश्रम न करो । थक जाओगी, पर मुझ में आज थकावट का नाम नहीं । शरीर में जीवन और आनंद का सागर उमड़ पड़ा है । जी होता है, सारे काम अपने हाथों से कर डालूं । किसी को कुछ भी न करने दूँ ।

माण्डवी

हां जीजी, ऐसा ही है । धरती तथा आकाश आज दोनो हर्ष और उत्साह से छा रहे हैं । तो भी मेरा मन न

जाने क्यों शंकित हो-हो उठता है ! कभी तो ऐसा नहीं होता था ।

सीता

कुछ नहीं बहिन ! देवर ननसाल से नहीं आ पाये हैं। इसीसे तेरा जी उचाट हो रहा होगा ।

माण्डवी

सो बात नहीं, जीजी । आज यों ही कुछ जी व्याकुल सा होता है ।

सीता

भगवान् सब मंगल करेंगे ।

माण्डवी

(चुप रहती है ।)

सीता

बहिन, मेरा हृदय काँप रहा है । ज्यों-ज्यों अभिषेक का समय समीप आ रहा है । मुझे भय-सा लग रहा है। अनेक कामों में उलझाकर मैं उसे बहलाना चाहती हूँ, पर आँखों के सामने से वह दृश्य ओझल ही नहीं होता । यही लगता है कि आर्यपुत्र सिंहासन पर बैठे हैं । छत्र उनके मस्तक पर रक्खा है । गुरु वशिष्ट के किये हुए तिलक से उनका माथा शोभित है । चंदन से शरीर चर्चित है । मैं उनकी बाईं ओर बैठी हूँ । मेरे माथे पर भी राजचिह्न है । तुम, उर्मिला और श्रुतकीर्ति मेरे पास हो । देवर लक्ष्मण

जल्दी से पूजा की सामग्री तैयार कराओ।—सुनो, और कौन-कौन साथ है ?

दासी

(हाथ जोड़कर) स्वामी अकेले ही आते हैं।

सीता

अकेले ही आते है ? देवर लक्ष्मण साथ नहीं हैं ? गुरु वशिष्ठ कहाँ रह गये ? आर्य सुमन्त भी नहीं हैं ?—शायद, सब को उधर ही छोड़कर आर्यपुत्र सीधे मेरे पास आते होंगे। कहेंगे जल्दी तैयार हो जाओ। तुम्हें सजने मे देर लगती है।—शायद मिथिला से पिताजी आनेवाले हैं, उनके विषय मे कुछ कहें ?

[राम का प्रवेश

दासी

स्वामी आ गये। [कहकर जल्दी-जल्दी जाती है।

सीता

(राम को देखकर) अरे यह क्या, अभी तो आर्यपुत्र को मैं बिलकुल सादे वेश मे देख रही हूँ। इस दिन के लिए बनाई गई आपकी पोशाक तो मैंने पहले ही भिजवा दी थी। आर्यपुत्र ने उसे अब तक नहीं पहना ?

राम

प्यारी !

राम

कोई बात नहीं है: प्यारी। सिर्फ इतनी-सी बात है कि अभिषेक नहीं होगा'।

सीता

(आहत-सी होकर) अभिषेक नहीं होगा ? क्यों ? किसलिए ?

राम

दुखी न हो सीते !--पिताजी के आदेश पर क्या दुखी होना चाहिए ?

सीता

पिताजी का आदेश है कि अभिषेक नहीं होगा ?

राम

हाँ, प्यारी।

सीता

तो अभिषेक होने किसके आदेश से जा रहा था ? क्या वह पिताजी का आदेश न था !

राम

सीता, प्रिये ! पिताजी के आदेश में उचित-अनुचित का विचार पुत्र और पुत्रवधू को नहीं करना होता है।

सीता

अपराध क्षमा हो। परन्तु कोई कारण रहा होगा !

राम

जरूर। पिताजी ने मझली माँ को कभी दो वरदान

राम

प्यारी जानकी, मै नहीं जानता था कि तुम्हे राज इतना प्यारा है। यदि जानता तो हाथ जोड़कर उसे मझली माँ से तुम्हारे लिए माँग लाता।—मुझे तो ख्याल भी न था कि मैं तुम्हे इतनी व्याकुल देखूंगा।

सीता

आर्यपुत्र! सीता को राज की कामना नही। वनवास का भय नहीं। परन्तु अभिषेक के अंतिम क्षण मे माँ को यह क्या सूझा? इस तमाम आयोजन का क्या होगा? प्रजा हम सब लोगो को क्या कहेगी? लज्जा से मेरा सिर पृथ्वी मे गड़ा जा रहा है।

राम

प्यारी! इसमे किसी का दोष नहीं। भावी बलवान होती है। मझली माँ तो एक निमित्त बन गई है।

सीता

आर्यपुत्र ठीक कहते हो, लेकिन मन मे तो विचार आये बिना नहीं रहते।

राम

प्रिये, सावधान हो; और इन विचारों को छोड़ो।—अब यह बताओ मेरे वनवास के समय तुम यहाँ किस प्रकार रहोगी? मेरे जाने से पिताजी को दुख होगा। माता कौशल्या व्याकुल होंगी। उस समय तुम्हीं उनका सहारा होगी।

मैं उनके साथ जाऊँगी ! मैं उनके आगे आगे वन के कुश और काँटे बुहारती चलूँगी ।

राम

वैदेही, तुम नहीं जानती । वन का तुम्हें तनिक भी ध्यान नहीं है । तुम राजहंसिनी हो तो वन खारा समुद्र है प्रिये ! तुम वहाँ एक दिन भी नहीं रह सकती हो । चलने को वहाँ मार्ग नहीं । खाने को भोजन नहीं । पीने को पानी दुर्लभ । तिस पर नंगे पाँव चलना । भूमि पर सोना । रूखे-सूखे फल-फूल खाना। वल्कल पहनना । ओह ! कहाँ तक कहूँ ।

सीता

कह लीजिये, आर्यपुत्र ।

राम

तुम चित्र देखकर डरनेवाली हो । बाघ और भेड़ियों के साथ कैसे रहोगी ? पद पद पर विषधर अजगर जहाँ रेंगते हैं । सिंह और चीते जहाँ घूमते हैं । कपटी कुटिल राक्षसों का जो घर है। जहाँ दोपहर को धरती तवे-सी जलने लगती है । जहाँ का शीत पत्थरों को भी कँपा देता है, ऐसे वन में तुम्हारे एक घड़ी रहने की बात भी मेरी कल्पना में नहीं आती ।

सीता

यह सच है स्वामी, कि मैं वन के योग्य नहीं हूँ ।

मिथिला और अयोध्या के राजमहलों से बाहर दुनियाँ मे क्या है यह मैं नहीं जानती। परन्तु तब मैं यह कैसे मान लूँ कि आप अकेले वन में रह सकेंगे ?

राम

पिता की आज्ञा को अमान्य कैसे कर दूं ?

सीता

मैं स्त्री के धर्म का त्याग कर दूँ ?

राम

सीते !

सीता

नाथ !

राम

नहीं जानता मैं तुम्हे क्यों कर समझाऊँ ? तुम्हारा यह हठ कैसे दूर करूँ ?

सीता

समझाने की कोई बात ही नहीं है, स्वामी। चौदह वर्ष तक अकेली छोड़ जाने से तो अच्छा है आप अपने हाथों से विष घोलकर मुझे देते जायँ। मैं बड़ी शांति से उसे पीकर सो जाऊँगी।

राम

मैथिली ! चौदह वर्ष सुनने मे ही बहुत लगते है। लेकिन दिन बीतते देर नहीं लगती। तुम अपना जी न

बिगाड़ो प्रिये! मैं बनवास की अवधि समाप्त होते ही लौट आऊँगा।

सीता

तो मेरी बात न सुनने का आपने प्रण कर लिया है?—वन में क्या आपको एक दासी की जरूरत न होगी? जब चलते-चलते आप थक जायँगे। पसीने की बूंदे आपके माथे पर झलक आयेंगी तब वृक्ष की छाया तले बैठ कर मैं ही आपके ऊपर अंचल से हवा करूँगी। झरने का शीतल जल लाकर आपके हाथ पैर धोऊँगी। संध्या समय कंदमूल फल परोस कर आपको खिलाऊँगी। रात को जब पत्तो की शैया पर आप श्रान्त-क्लान्त पड़ रहेंगे तो मै धीरे धीरे आपके पैर दावूँगी।

राम

सो तुमने यही निश्चय कर लिया है?

सीता

हाँ इसके सिवा मैं और क्या कर सकती हूँ। वन के जिन कष्टों का आपने वर्णन किया है आपके साथ रहने और आपके चरणों का दर्शन करने से वे मेरे लिए फूलो की तरह सुखदायक हो जायेंगे। वहाँ के पशु-पक्षियों से डरने की मुझे आवश्यकता नहीं है। वे सब मेरे सहायक होंगे। मैं उनके स्नेह की छाया मे जहाँ चाहूँगी निर्भर विचरूँगी।—इतने पर भी आप मुझे यहाँ रखना चाहें तो मेरा शरीर ही रहेगा, प्राण नहीं रहेंगे। इसे सच जानिये।

राम

यह बात है तो तुम मेरे साथ ही चलो । उठो, देर न करो । माता कौशल्या से चलकर विदा लो ।

सीता

सासुजी तो इधर ही आ रही हैं ।

[कौशल्या का प्रवेश, सीता माथे का अंचल ठीक करके प्रणाम करती है

कौशल्या

सौभाग्यवती होओ । (राम से) वत्स रामचंद्र, यह मैं क्या सुन रही हूँ ?

राम

माँ यह बात सच है ।

कौशल्या

तब महाराज की बुद्धि भ्रष्ट हो गई है ।

राम

ऐसा न कहो माता ।

कौशल्या

तो क्या कहूँ ? क्या यह कहूँ कि अभिषेक न हो ? क्या यह कहूँ कि तुम अयोध्या छोड़कर बनवासी हो जाओ ?

राम

यही कहो माँ—यही कहो ।

कौशल्या

नहीं, यह अन्याय मैं न होने दूंगी। मैं राजमाता हूँ, राम। तुम चलो, सभा-भवन में चलो। वशिष्ठ और सुमन्त इनकार करेंगे तो मैं अपने हाथ से तुम्हारा अभिषेक करूँगी।—क्या कैकेयी के कह देने से अभिषेक रुक जायेगा?

राम

माँ, शान्त होओ।

कौशल्या

नहीं, राम! इस समय शान्ति की बात मत करो।

राम

माँ, क्या तुम यह कहती हो कि मैं पिता की आज्ञा को तोड़ डालूँ?

कौशल्या

राम, बेटा! मैं तुम्हारी माँ हूँ। पिता से भी बड़ी। मेरी आज्ञा है कि तुम अभिषेक से विमुख न हो। अभिषेक से विमुख हो जाना कायरता है।

राम

कभी नहीं माँ, कभी नहीं! माता-पिता की आज्ञा पालन करना कायरता नहीं हो सकती। फिर तुम्हारे लिए तो मेरा और भैया भरत दोनों का अभिषेक समान है। कहो, क्या भरत तुम्हें मेरी ही तरह प्रिय नहीं हैं?

कौशल्या

वेटा राम ! धर्म की वेश-भूपा पहनकर आये हुए अधर्म से तुम इतने क्यो डरते हो ?

राम

माँ, यह तो प्रसन्न होने की वात है कि तुम्हारा राम इतना धर्मभीरु है !

कौशल्या

वत्स, यदि यही वात है तो मैं भी तुम्हारे साथ वन को चलूँगी । हिम, वर्षा और घाम मे मैं अपने वच्चे की छाया वनकर रहूँगी ।—इस अयोध्या मे, स्वार्थ की इस नगरी मे, एक वार सांस लेना भी मुझे सह्य नहीं ।

राम

माँ मोह मत करो । पिता जी की दशा देखो । मैं अभी देखकर आया हूँ । आह ! कैसी दीन दशा हो रही है । मेरी अनुपस्थिति मे तुम्हारे सिवा और कौन उनके शरीर को रख सकेगा ?

कौशल्या

राम, वत्स ! तुम सव को देखते हो पर अपनी माँ को नहीं देखते ! हाय ! मै तुम्हारे विना क्या करूँगी ? कैसे जियूंगी ? तुम अकेले वन मे घूमोगे और मै राजमहलो मे सुख भोगूँगी ! आह ! (आँसू पोछती है)

अकेला क्यों रहूँगा माँ ? यह मैथिली भी तो मेरे साथ है।

कौशल्या

(चौंककर) क्या कहा बेटा, सुकुमारी सीता भी तुम्हारे साथ वन जायेगी ? राजा जनक की लाड़िली जानकी भी वनवासिनी होगी ? बेटा मेरा हृदय वज्र नहीं है जो ऐसी बातें सुन सके।—जो सिरीष के फूल की तरह कोमल है। भूलकर भी जिसने कभी धरती पर पाँव नहीं दिया है। जो सदा गोद और पालनों में ही पली है। जिसे मैंने आँख की पुतली बना कर रक्खा है। जिससे कभी दीपक की बत्ती भी हटाने को नहीं कहा है। वह—यह मेरी चन्द्रकिरन जंगलों में मारी-मारी फिरेगी। मैं नहीं सुन सकती राम, मैं नहीं सुन सकती।

[मूर्च्छित होती है। राम हाथ का सहारा देते हैं। सीता अंचल से हवा करती है।

विदा

नट
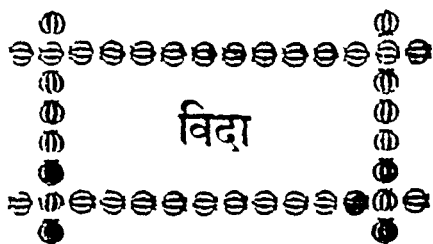
लक्ष्मण	अयोध्या के राजकुमार, राम के छोटे भाई
सुमित्रा	लक्ष्मण की माता
उर्मिला	लक्ष्मण की स्त्री

अयोध्या के राजभवन का अन्तःपुर

प्रातःकाल

एक ओर से सुमित्रा और दूसरी ओर से लक्ष्मण का प्रवेश

लक्ष्मण

(चरणों में झुककर प्रणाम करते हैं) माँ !

सुमित्रा

अरे बेटा, लक्ष्मण ! इस समय यहाँ क्यो ?

लक्ष्मण

माँ !

सुमित्रा

कह बेटा । जल्दी कह । अभिषेक का समय हो रहा है । मुझे अभी देवी कौशल्या के मन्दिर मे जाना है । वे वहाँ मेरी प्रतीक्षा करेंगी । हम लोग साथ-साथ ही सभा भवन में जायँगी ।

लक्ष्मण

किन्तु माँ, आपको तो वहाँ जाना न पड़ेगा ।

सुमित्रा

नहीं बेटा, देवी कौशल्या का अनुरोध है । जाना अवश्य पड़ेगा । यह अभिषेक तो सभी को प्रिय है । तुम

तो इस दिन के लिए उतावले हो रहे थे । फिर आज उदास क्यो हो ?

लक्ष्मण

माँ, आश्चर्य है आपको कुछ भी मालूम नही है । सारे नगर मे उत्सव की जगह दुख की घटा छा गई है ।

सुमित्रा

महाराज कुशल से तो हैं बेटा ? राम और सीता स्वस्थ तो हैं ?

लक्ष्मण

सो तो हैं, परन्तु माँ !

सुमित्रा

कह डालो । कह डालो, वत्स । कितनी भी कठोर बात क्यो न हो, कह डालो ।

लक्ष्मण

माँ, अभिषेक अब न होगा । भैया रामचन्द्र का अभिषेक अब न होगा । (गला भर आता है)

सुमित्रा

तो किसका का अभिषेक होगा ?

लक्ष्मण

भरत का ।

सुमित्रा

भरत का, ऐं ! भरत का । किसलिए ?

लक्ष्मण

मझली माँ चाहती हैं ।

सुमित्रा

मझली माँ आज चाहती हैं इसलिए राम का अभिषेक न होकर भरत का होगा ।—कल वे चाहेंगी मंथरा के नाम की राजमुद्रा लगे, तो असल राजमुद्रा समुद्र की भेंट करके मंथरा की राजमुद्रा लगेगी । अरे, यह सब मैं क्या सुन रही हूँ ? महाराज कहाँ हैं ? अवस्था के साथ-साथ क्या उनका राजदण्ड भी शिथिल हो गया है ?

लक्ष्मण

छल से मझली माँ ने पिताजी से दो वचन ले लिए हैं । वे जानती हैं पिताजी वचन से कभी न फिरेंगे ।

सुमित्रा

क्या वचन ले लिए हैं ?

लक्ष्मण

यही कि अभिषेक भरत का हो ।

सुमित्रा

यह तो सुन लिया, और—।

लक्ष्मण

और चौदह वर्ष तक राम तपस्वी वेश में बनवास करें ।

सुमित्रा

(कानों पर हाथ रखकर) धरती माता, तुम सुन रही हो, तो भी तुम कैसे अब तक ठहरी हो ? चली जाओ, रसातल को चली जाओ। ऐ आकाश, तू क्यों थमा है ? चूर चूर होकर गिर क्यों नहीं पड़ता ?—आह, एक विमाता का बेटे के लिए यह क्या ही सुन्दर पुरस्कार है !

लक्ष्मण

शान्त हो माँ,

सुमित्रा

शान्ति, शान्ति का नाम न ले लक्ष्मण। तू सुमित्रा की कोख से पैदा होकर भी ऐसे समय शान्ति का नाम लेता है। छिः, तू कायर है। निकल जा यहाँ से।—और अगर सचमुच मेरा बेटा है, तो जाकर अभी धरती को उलट-पलट कर दे। कैकेयी को बता दे कि उसका दुष्ट विचार कभी सफल होने न दिया जायगा।

लक्ष्मण

किन्तु माँ, भैया रामचंद्र की आज्ञा नहीं है।

सुमित्रा

तो रामचंद्र की क्या आज्ञा है ?

लक्ष्मण

वे वन को जा रहे हैं, माँ !

लक्ष्मण

माँ ! यह दुख से अधीर होने का समय नहीं है ।

सुमित्रा

तो क्या करूँ बेटा ! उत्सव मनाऊँ ?

लक्ष्मण

धैर्य धरो । भैया राम का अनुकरण करो । देखो, कितने धैर्य के साथ उन्होंने इस समाचार को सुना है और अभिषेक छोड़कर हँसते-हँसते वन जाने को तैयार हो गये हैं ।

सुमित्रा

तो राम और सीता को अकेला वन जाने दूं ? बेटा, देवी कौशल्या क्या कहेंगी ?

लक्ष्मण

अकेले क्यों माँ ? क्या भैया राम कभी अकेले रहे हैं ? क्या उनका यह छोटा भाई सदा छाया की भाँति उनके पीछे नहीं गया है ? ऋषिवर विश्वामित्र के आश्रम में भी तो हम दोनो साथ ही गये थे, माँ !

सुमित्रा

लक्ष्मण, वत्स ! तुम भी राम और सीता के साथ जाओगे ?

लक्ष्मण

मां, तुम कहोगी तो अवश्य जाऊँगा ।

सुमित्रा

हाय, मुझे यह भी कहना पड़ेगा ?

[आँखों में आँसू और कंठावरोध

लक्ष्मण

मां, ऐसा समय बारबार नहीं आयेगा ।

सुमित्रा

(आँसू पोंछकर) वत्स, इस वक्षस्थल मे मां का हृदय धड़कता है जरूर परन्तु वह ऐसा नहीं है जो कर्तव्य के प्रति मोह से अन्धा हो जाय ।

लक्ष्मण

सो क्या मैं नहीं जानता ?

सुमित्रा

तो मेरी ओर से तुम्हे कोई बाधा नहीं है ।—राम तुम्हारे लिए सब प्रकार पिता तुल्य हैं और सीता माता तुल्य । तुम उनकी सेवा मे जाओ । मुझे सब प्रकार सन्तोष है ।

लक्ष्मण

(झुककर माँ के चरणो में प्रणाम करते है)

सुमित्रा

बेटा, तुम अपना जीवन सफल करो । जिधर राम और सीता जाना चाहे उधर मार्ग बनाते हुए तुम उनके आगे आगे चलो ।— इस अयोध्या मे, जो राम और

सीता को नहीं सह सकती, एक क्षण भी ठहरना तुम्हारे लिए उचित नहीं है ।

लक्ष्मण

मां, ऐसा ही होगा ।

सुमित्रा

बेटा, अब मुझे लग रहा है कि तुम्हारे भाग्य ने ही राम वन जा रहे हैं । नहीं तो ऐसा संयोग ही क्यों होता ?

लक्ष्मण

(प्रणाम करते हैं) यही है, माँ !

सुमित्रा

जाओ बेटा, जाओ । देर मत करो । कैकेयी अगर अपने पुत्र के लिए सौत के पुत्र को निर्वासित कर सकती है तो सुमित्रा उसी के लिए अपने पुत्र का वियोग भी सह सकती है ।—तुम जाओ ।

लक्ष्मण

(घुटने टेक कर प्रणाम करते हैं)

सुमित्रा

वत्स आओ तुम्हें एक बार अपनी छाती से लगा लूं । पीछे चलकर देवी कौशल्या को खबर दूं ।— आह ! दुखियारी कौशल्या !

[illegible]

उर्मिला

हा, नाथ ! यह क्या हो गया ?

[छिन लता सी आकर लक्ष्मण
की गोद में गिर पड़ती है ।

लक्ष्मण

रानी ! प्रिये !—धैर्य धरो ।

उर्मिला

(लक्ष्मण की गोद में सिर छिपाकर) यह सब क्या हो गया नाथ !

लक्ष्मण

जो होना था सो हो गया प्रिये !

उर्मिला

मैं न जानती थी कि अयोध्या के राजभवन में ज्वालामुखी फूट पड़ेगा ।

लक्ष्मण

हाँ, यह कौन जानता था ?

उर्मिला

जीजी के शरीर पर वल्कल देखकर मेरा तो कलेजा फटता है ।

लक्ष्मण

लेकिन इस प्रकार धीरज खो देने से कैसे चलेगा ?

उर्मिला

धीरज की भी एक सीमा होती है नाथ !

लक्ष्मण

होती है परन्तु वंश-गौरव के अनुसार उनका विस्तार बढ़ता जाता है।—देखो, माँ कौशल्या क्या एक साधारण नारी की तरह रोती है ?

उर्मिला

परन्तु स्वामी, मुझसे यह शिष्टाचार नहीं पलता। मेरे हृदय का बाँध आज छिन्न-भिन्न हो गया है।

लक्ष्मण

(उर्मिला को उठाकर बिठाते हुए) छिः तुम आज कैसी हो रही हो ?

उर्मिला

नाथ मुझसे वह दृश्य देखा न जायगा। तुम्हारे भैया मुकुट के स्थान पर जटाजूट बाँधकर नंगे पाँव घर से विदा होंगे। वल्कलधारिणी जीजी सीता उनके पीछे-पीछे होंगी! उन्हे विदा करके माँ कौशल्या और महाराज धूल मे लोट रहे होंगे। सारी अयोध्या विलखती होगी। सरयू नीर की जगह आँसू बहाती होगी। वह दृश्य वह करुणापूर्ण व्यापार, मै कैसे देख सकूँगी, स्वामी !

लक्ष्मण

रानी, ऐसे दुख के समय तुम्हारा यही कर्तव्य है क्या ? क्या तुम चाहती हो कि भाभी तुम्हारी यही रोती हुई मूर्ति देखकर विदा हों ? तुम्हे सोचना चाहिए कि भैया कर्तव्य

के अनुरोध से ही वन को जा रहे हैं । यदि वे न जाना चाहे तो उन्हे कौन विवश कर सकता है ? पिताजी तो उल्टे उनसे प्रसन्न होगे ।—इसलिए प्रिये ! कर्तव्य का विचार करो और धीरज धरो ।

उर्मिला

कर्तव्य, कर्तव्य—कर्तव्य की बात सोचती हूँ, तो स्वामी ! मेरे मन मे एक विचार उठता है ।

लक्ष्मण

क्या विचार उठता है, प्रिये !

उर्मिला

वज्र-कठोर एक विचार जिसके सामने क्षण भर मे मेरा कर्तव्य पानी पानी होकर बह जाता है ।

लक्ष्मण

वह वज्र-कठोर विचार ही तो कर्तव्य की कसौटी है ।

उर्मिला

नहीं स्वामी, मेरा हृदय उसके आगे काँप उठता है ।

लक्ष्मण

बोलो, प्रिये ! बोलो । वह क्या है ?

उर्मिला

उसे न सुनो नाथ ! उसे जानने का अनुरोध न करो ।

लक्ष्मण

मैं तुम्हारी तरह कोमल नहीं हूँ, रानी ! तुम निर्भय होकर कहो ।

उर्मिला

वन के बीहड़ पथ मे जब जेठ और जीजी की मैं कल्पना करती हूँ तो मुझे उसमे कुछ अपूर्णता-सी दिखाई देती है। आगे आगे जेठजी पीछे जीजी उनके पीछे धनुष-बाण लिए तुम्हे देखती हूँ तभी मुझे संतोष होता है । तब किसी तरह का भय नहीं रह जाता ।—आह ! स्वामी ! कैसा भयानक है यह विचार !

[लक्ष्मण उर्मिला को खींचकर गले से लगा लेते है ।

लक्ष्मण

रानी, प्रिये ! तुम्हारे विचार भी तुम्हारी ही तरह सुन्दर होते हैं ।

उर्मिला

नहीं नाथ ।

लक्ष्मण

आओ, प्रिये ! विदा दो। मैं भैया और भाभी के साथ जाकर तुम्हारी कल्पना को सत्य करूँ ।

उर्मिला

(भयभीत होकर) क्या कहते हो, स्वामी ?

लक्ष्मण

तुम्हारे ही विचार को मूर्त रूप देता हूँ प्रिये!

उर्मिला

नहीं, नाथ ! वसन्त के इस प्रभात में क्या मुझे अकेली छोड़कर चले जाओगे ?

लक्ष्मण

रानी, आकाश की तरह ऊँची उठकर अब तुम मोह के पाताल मे जा रही हो ?

उर्मिला

परन्तु यही सत्य है, स्वामी ! वह तो कल्पना थी, शून्य था!

लक्ष्मण

नहीं उर्मिले, वही सत्य था, प्रिये !

उर्मिला

नाथ !

लक्ष्मण

माता सुमित्रा से मै पहले ही विदा ले चुका हूँ रानी ! इसलिए अब तुम व्यर्थ अपने हृदय को छोटा न करो।— तुम स्वभाव से ही कितनी उदार हो प्रिये! फिर आज यह मोह क्यो ? मै कहीं भी रहूँ तुम्हारे मन मे रहूँगा। तुम कहीं भी रहो मेरे हृदय से बाहर नहीं रह सकती। फिर इतनी अधीर क्यों होती हो ?—समझ लो मैं तुम्हारे पास ही हूँ। अवधि

बीतते ही हम लोग फिर मिलेंगे। उस मधुर मिलन की प्रतीक्षा में वियोग के समय का तुम्हे पता भी न चलेगा।

उर्मिला

नाथ, उर्मिला तो आपकी इच्छा की दासी है। आप जो उसके लिए मंगलकारक समझे उसके आगे वह सदा सिर झुकाती है।

लक्ष्मण

तुम लक्ष्मण की हृदयेश्वरी हो, रानी !

उर्मिला

मै तो चरणों की दासी हूँ, स्वामी !

लक्ष्मण

नहीं तुम हृदयेश्वरी हो और सदा हृदयेश्वरी ही रहोगी।

[उर्मिला लक्ष्मण की छाती में सिर दे देती है। अच्छी तरह आलिंगन करने के बाद धीरे-धीरे दोनों अलग होते हैं। उर्मिला की आंखें नजल है। धीरे-धीरे लक्ष्मण का प्रस्थान।

उर्मिला

हाय यह क्या हुआ !

[इन्दिरा का प्रवेश

सुमित्रा

हाय, मेरी कोकिला उर्मिला, बेटी ! मेरी मधुमय राका की चन्द्रलेखा ! हाय तेरी यह दशा !

[उर्मिला रोती है । सुमित्रा उसे गोद में लेकर दुलारती है ।

वन-पथ

नट

राम	अयोध्या के वनवासी राजकुमार
लक्ष्मण	राम के छोटे भाई
सीता	राम की स्त्री
भरद्वाज	महर्षि जिनका आश्रम प्रयाग में है।
वाल्मीकि	महर्षि जिनका आश्रम यमुना-तट पर है।
	ग्राम वधुएँ, ग्रामीण पुरुष, पथिक आदि

प्रयाग मे महर्षि भरद्वाज के आश्रम के समीप का मार्ग

प्रातःकाल

राम, लक्ष्मण और सीता विदा ले रहे हैं। अपनी शिष्य-मंडली के साथ महर्षि भरद्वाज उन्हें विदा करते है। सीता के समीप देवी अनुसूया तपस्विनियों के साथ खड़ी है।

भरद्वाज

महानुभाव! आज तीर्थ और आश्रम का निवास सार्थक हो गया।

राम

हमारे पूर्वजन्म के कोई महान पुण्य थे जो आप जैसे तपोधन महर्षि के दर्शन हो सके।

भरद्वाज

एक रात का आपका निवास आश्रम को पुण्य गाथा के एक सुन्दर अध्याय के रूप मे सदा अमर रहेगा।

राम

आप जैसे मनीषी महर्षि से यह बड़प्पन पाकर मैं अपने को धन्य समझता हूं।—हम लोगो का आतिथ्य करने मे आप तथा अन्य ऋषिवरो को बहुत कष्ट हुआ है। वह हम लोगो को सदा याद रहेगा।

भरद्वाज

महानुभाव रामचन्द्र ! आपके ये विनय-वचन कितने मधुर हैं। इनके कारण ही आप इतने महान हैं ।

राम

महर्षि, कृपा करके अब आशीर्वाद दीजिये । भगवान् सूर्य चाहते हैं कि मैं शीघ्र ही सामनेवाला मार्ग पार कर लूं ।

भरद्वाज

महानुभाव, मेरा आशीर्वाद सदा आपके साथ है। आप पधारिये ।

राम

(हाथ जोड़कर) भगवान् को प्रणाम करता हूँ ।

लक्ष्मण

महर्षि को प्रणाम है ।

[महर्षि भरद्वाज तथा अन्य ऋषि हाथ उठाकर आशीर्वाद देते हैं।

सीता

(देवी अनुसूया से) देवीजी के चरणों मे मैं प्रणाम करती हूँ।

अनुसूया

(सिर पर हाथ रखकर) सौभाग्यवती होओ ।

[राम, लक्ष्मण और सीता चलते हैं, आश्रमवासी महर्षि तथा तपस्विनी स्त्रियां लौटती हैं।

राम

(मार्ग में चलते-चलते) देखो लक्ष्मण, सामने कोई गाँव दीख रहा है।

लक्ष्मण

गाँव ही है।

सीता

अहा! कैसा सुन्दर गाँव का यह दृश्य है। वन की हरियाली ने उसे अपनी गोद मे कितने प्यार से ले रक्खा है!

राम

कोई लोग इधर ही आ रहे हैं।

लक्ष्मण

स्त्रियाँ और बालक भी हैं।

राम

शायद हम लोगो के पास ही आ रहे हैं।

सीता

मै भी देखूँ कौन हैं?

[आगे आकर देखती है। गाँव के स्त्री-पुरुषों का मार्ग के किनारे-किनारे एक एक कर दिखाई देना।

पहली स्त्री

सखी, कैसा अपूर्व रूप है!

दूसरी स्त्री

सचमुच अपूर्व है ।

तीसरी स्त्री

सुनती हूँ सखी ये राजकुमार हैं । इन्हे माँ-बाप ने घर से निकाल दिया है ।

चौथी स्त्री

कैसे राक्षस हैं वे माँ-बाप सखी ! ऐसे सुकुमार और कोमल राजकुमारो को उनसे कैसे निकाला गया ?

पहली स्त्री

सच पूछो तो उन्होने अच्छा किया ।

दूसरी स्त्री

क्या अच्छा किया ?

पहली स्त्री

नहीं तो हम लोगो को इनके दर्शन कहाँ मिलते ?

तीसरी स्त्री

इनके कोमल पैरो से इस मार्ग के भाग्य खुल गये सखी !

चौथी स्त्री

सच कहती हो बहिन ! हम लोगो का जीवन भी आज धन्य हो गया ।-देखो, अब देखो सखी. वे वट के पेड़ के नीचे ठहर गये । मार्ग चलने के कठिन परिश्रम से व्याकुल हो रहे हैं ।

पहली स्त्री

पैदल चलने का अभ्यास नहीं मालूम होता । इसी से इतने श्रान्त दिखते हैं ।

दूसरी स्त्री

चलो बहिन, उनके पास चलकर पूछें। शायद भूखे प्यासे हों ?

तीसरी स्त्री

हाँ-हाँ, चलो बहिन।

चौथी स्त्री

बहिन, परन्तु राजकुमारी हमसे बोलेगी भी कि नहीं ?

पहली स्त्री

अवश्य बोलेगी। देखो, कैसी भोली दिखती है ? गर्व और बड़प्पन उसके चेहरे पर कहाँ हैं ?

दूसरी स्त्री

हाँ, बिल्कुल नहीं है। चलो हम सब चलें।

[राम, सीता और लक्ष्मण वट की छाया में बैठे हैं। स्त्रियाँ वहाँ जाती हैं। राम-लक्ष्मण एक ओर जा बैठते हैं, और ग्रामबालाएँ सीता को चारों ओर से घेर लेती हैं। सीता सकुचाई हुई बैठी रहती है।

पहली स्त्री

राजकुमारी, हम लोग गँवार हैं। कोई अनुचित बन पड़े तो क्षमा करना।

गीता

आप लोगों में जितना प्रेम देखती हूँ उससे तो आप लोगों के सामने मैं ही गँवार ठहरती हूँ।

दूसरी स्त्री

राजकुमारी, ऐसा न कहो।

तीसरी स्त्री

आप थक गई होंगी। जल ले आऊँ?

[जाती है।

चौथी स्त्री

आप भूखी होंगी। कुछ फल ले आती हूँ।

[जाती है।

सीता

बहिन, मुझे तो आप लोगों में घर की याद भूल गई। कैसा अपूर्व आप लोगों का प्रेम है!

१ ली स्त्री

राजकुमारी, यह बड़ाई तो आपको ही मिलनी चाहिए। जरा भी गर्व न करके आप हम लोगों से इस प्रकार बोल रही हैं।

सीता

गर्व की क्या बात है बहिन?

दूसरी स्त्री

आप यहीं क्यों नहीं रह जातीं? हम लोग किसी प्रकार आपको कष्ट न होने देंगे।

सीता

धन्यवाद, परन्तु वहिन हम लोग ठहर नहीं सकते ।

[तीसरी स्त्री झारी में जल लेकर आती है ।
चौथी दोने में कंद मूल लेकर आती है ।

तीसरी स्त्री

राजकुमारी, हमारे हाथ का जल लेकर हमें कृतार्थ करो ।

चौथी स्त्री

ये कंद-मूल स्वीकार करके मुझे कृतार्थ करो ।

सीता

लाओ वहिन, लाओ ।

[जल की झारी और दोना लेती है ।

तीसरी स्त्री

राजकुमारी, ये थोड़े से फूल भी हैं । इन्हें भी ले लो ।

सीता

लाओ । धन्यवाद ।

[झोली में से फूल देती है ।

पहली स्त्री

([illegible]) राजकुमारी, एक बात बताओगी ?

सीता

पूछो, पूछो, बहिन । शंका क्यों करती हो ?

पहली स्त्री

ये तुम्हारे कौन हैं ? ([illegible])

सीता

(लजाने और संकुचित होने का नाट्य करती हुई।) बहिन, ये जो बाईं ओर बैठे हैं, जो सहज ही सुन्दर और गौरवर्ण हैं, ये मेरे छोटे देवर लक्ष्मण हैं। (फिर आंख के इशारे से रामचन्द्र को बताती हैं, और लजाती हुई कहती हैं) और वे देवर के बड़े भाई हैं।

[स्त्रियां प्रसन्न होती, और सीता को आशीर्वाद देती हैं।

सब

तुम पति को प्यारी हो। तुम्हारा सुहाग अचल रहे।

सीता

धन्यवाद।

पहली स्त्री

हमे भूल मत जाना, राजकुमारी !

सीता

बहिन, तुम मुझे बहिन मांडवी की तरह याद रहोगी।

दूसरी स्त्री

राजकुमारी, हम लोग यही मनाती रहेंगी कि आप जल्दी लौटकर आएँ।

सीता

हाँ बहिन, अगर हो सका तो हम इधर से ही आयेंगे।

तीसरी स्त्री

हमे दासी समझकर दर्शन अवश्य देना।

सीता

बहिन, तुम तो मुझे उर्मिला की तरह प्रिय होगई हो।

चौथी स्त्री

राजकुमारी, अपने चरणों की धूल मुझे ले लेने दो।

सीता

बहिन, इतना मान देकर तुम मुझे कृतज्ञता के भार से दबा रही हो।

[सब बारी-बारी से चरणों की धूल लेती है। सीता सब से स्नेह वचन बोलती है।

रामचंद्र

भैया लक्ष्मण ! महर्षि बाल्मीकि के आश्रम का मार्ग तो पूछो।

लक्ष्मण

(एक ग्राम-युवक से) भैया, महर्षि बाल्मीकिजी का आश्रम किधर है ?

युवक

महाराज, अभी दूर है। आप कहें तो मैं साथ चल कर पता दूं?

लक्ष्मण

नहीं, मार्ग बता दीजिये। हम चले जायँगे।

युवक

आइये महाराज, यह मार्ग है। यह महर्षि के आश्रम के पास से होकर निकलता है।

लक्ष्मण

(रामचन्द्र से) चलिये, महाराज ! (सीता से) चलो, भाभी।

[सब वन के मार्ग से आगे बढ़ते हैं। गाँव के स्त्री-पुरुष दुखी होते हुए लौटते हैं।

राम

प्रकृति के कण कण में यहां अतिथि-सत्कार का भाव भरा है।

सीता

इसी वन के लिए आप मुझे डराते थे? मुझे तो यह स्वर्ग से भी सुन्दर लगता है।

लक्ष्मण

इन वनवासियों ने तो अयोध्यावासियों के सत्कार को फीका कर दिया है, भाभी !

सीता

मैं तो भगवान् से प्रार्थना करती हूँ कि मैं सदा वनवासिनी रहूँ।

राम

देखो लक्ष्मण अब आगे मार्ग नहीं समझ पड़ता। वन की सघनता में मार्ग खो गया है।—आगे बढ़कर तनिक उन पथिकों से पूछो तो कि हमें अब किधर जाना है?

लक्ष्मण

जो आज्ञा। [जाकर पथिकों से पूछते हैं।

पहला पथिक

श्रीमन्, आप कौन है ? और वे देवोपम पुरुष कौन है ? उनके साथ वन मे राजलक्ष्मी-सी वे कौन है ?

लक्ष्मण

भाई, हम अयोध्या के महाराज दशरथ के पुत्र हैं। वे मेरे अग्रज महानुभाव रामचंद्र हैं। वे मिथिलेशदुलारी मेरी पूजनीया भाभी हैं।

दूसरा पथिक

श्रीमन्, आपके दर्शन से हमारा जीवन सफल हो गया।

पहला पथिक

श्रीमन्, आप इस निर्जन वन मे कैसे घूमते हैं ?

दूसरा पथिक

यह तो बड़े आनन्द की यात है कि इस वन-खंड के पशु-पक्षियों वृक्ष-लताओ को आप अपने दर्शन से धन्य कर रहे हैं।

पहला पथिक

देखिये तभी न मार्ग की यह दूब श्रीमानों के चरण स्पर्श से लहलहा उठी है।

लक्ष्मण

भाई, यह वात नहीं है। हम तो आप लोगों की तरह ही साधारण प्राणी हैं।

[राम और सीता पास आ जाते हैं। पथिक हाथ जोड़कर उन्हें नमस्कार करते है।

पहला पथिक

श्रीमन् , मार्ग तो यही सीधा है परन्तु हमारा अनुरोध है कि आप इसी सघन कुंज की छाया मे थोड़ा विश्राम कर लें। थोड़ी देर आपके साथ हम भी रह लेंगे। हमारे लिए यही बहुत है।

राम

(लक्ष्मण की ओर देखकर) धूप अधिक है ! तुम्हारी भाभी भी थक गई प्रतीत होती हैं। दोपहरी यहीं बितालें, फिर आगे चलेगे।

लक्ष्मण

हाँ महाराज, भाभी के पैरो मे छाले पड़ गये हैं। वे मुँह से नहीं कहतीं पर चलना कठिन हो रहा है।

राम

(पथिकों से) ठीक है। दोपहरी भर यहीं विश्राम करेंगे।

पहला पथिक

श्रीमन्। कहिये आराम करने के लिए फूलो का बिछौना बिछा दें ?

दूसरा पथिक

वृक्षो ने स्वयं ही फूल गिराकर बिछौना बिछा दिया है। हम लोग श्रीमान् के पीने के लिए झरने का शीतल जल ले आये ?

[दोनों का प्रस्थान।

(राम, सीता और लक्ष्मण विश्राम करते हैं।)

सीता

स्वामी, वन में तो मैंने बिल्कुल नई दुनियां देखी।

राम

मैंने भी प्रिये !

सीता

ऐसा क्यों है, स्वामी ?

राम

इसीलिए कि यहाँ स्वार्थों का संघर्ष नहीं है। उदार प्रकृति का कोष सबके लिए मुक्त है। जल-वायु, फल-फूलों पर यहां किसी का इजारा नहीं है। जितने चाहे लो। जितने चाहे भोगो।

सीता

तभी यहाँ सब कोई उदार है।

लक्ष्मण

ये तपोधन महर्षि इसीलिए प्रकृति की गोद में आश्रम बनाते हैं। पशु-पक्षियों के साथ विचरते हैं। सबसे प्रेम करते हैं।

राम

स्वाभाविक जीवन यही है।

सीता

तो नगरों में हम स्वाभाविक जीवन नहीं व्यतीत करते ?

राम

कैसे कर सकते हैं ?

सीता

तो सब यहीं क्यों नहीं रहते ?

राम

वहाँ हम बांट-बाट कर खाना सीखते हैं । नये-नये कर्तव्यों को पहचानते हैं । वनवासियों को वह सुविधा कहां ? इसीलिए वन वन हैं, और नगर नगर हैं ।

सीता

तो यह कहिये कि दोनों ही आवश्यक हैं ?

राम

हां दोनों की अपनी अपनी उपयोगिता है ।

लक्ष्मण

तो भी मुझे तो नगरों से ये स्वास्थ्यप्रद वन और उद्यान ही भले लगते हैं ।

राम

यह तो रुचि की बात है ।

[पथिकों का झोली में फल देना ।

पहला पथिक

लीजिये श्रीमन् !

दूसरा पथिक

लीजिये श्रीमन् !

राम

लाओ भाई !

[जल लेकर पीते हैं। लक्ष्मण और सीता भी आचमन करते हैं।

सीता

कितना मीठा और शीतल जल है !

लक्ष्मण

भाभी, प्रकृति ने अपने हाथों से इसमें मिश्री घोली है।

राम

इन भाइयों के प्रेम ने इसे और भी मीठा बना दिया है।

(पथिकों की ओर संकेत करते है)

पहला पथिक

राजकुमार, आप लोगों का दर्शन करने से जल स्वयं मीठा हो गया है।

दूसरा पथिक

आपके श्रीचरणों को प्रक्षालित करके वन के सब झरनों का हृदय शीतल हो गया है। इसीसे जल ठंढा है।

सीता

(राम की ओर देखकर मुस्कराती हैं।)

राम

(सूर्य की ओर देखकर) लक्ष्मण, घाम मन्द पड़ चली है। अब हमें चलना चाहिए।

लक्ष्मण

चलिये, भाभी !

[सब खड़े होते हैं।

दोनों पथिक

(खड़े होकर हाथ जोड़ते हैं।) राजकुमार, यह मिलन हम कभी नहीं भूल सकेंगे।

राम

हम भी क्या भूल सकेंगे, भाई !

[पथिक चरणों मे झुकते है। राम आशीर्वाद देते और आगे बढ़ते हैं।

(राम, सीता और लक्ष्मण चले जा रहे हैं। वन का दृश्य बदलता जा रहा है।)

लक्ष्मण

देखो, भाभी ! प्रयाग से यहाँ कितना परिवर्तन हो गया है?

सीता

हाँ, अब वे वृक्ष भी कम दिखते हैं। उनके स्थान पर नयी नयी जाति के वृक्ष दिखाई देने लगे है। भूमि भी कुछ बदली हुई सी लगती है।

राम

भगवती भागीरथी के काँठे को पार करके हम अब यमुना के काँठे मे आ गये हैं इसीसे यह परिवर्तन दिखाई पड़ता है।

सीता

यहाँ तो सब नया ही नया है। पीछे के सारे दृश्य एक दम बदल गये।

लक्ष्मण

अब हम शीघ्र यमुनाजी के दर्शन करेंगे।

राम

लक्ष्मण, देखो सामने ये महर्षियों जैसे कौन लोग है? कहीं ऋषिवर वाल्मीकि तो नहीं हैं ?

लक्ष्मण

(देखकर) महर्षि-मंडली ही दिखती है। शायद हम लोगों का आगमन सुनकर लेने को आ रहे हों।

राम

यही होगा।

[महर्षि-मण्डली पास आ जाती है। राम महर्षि वाल्मीकि के चरणों में लक्ष्मण और सीता सहित प्रणाम करते हैं।

वाल्मीकि

जय हो राजकुमार !

राम

दर्शन से कृतकृत्य हुआ, महर्षि !

वाल्मीकि

चलिए, आश्रम मे पधारिये, महानुभाव !

राम

(सीता से) मैथिली, चलो देव-तुल्य महर्षि वाल्मीकि के आश्रम का दर्शन करें।

सीता

मै तैयार हूँ, स्वामी ।

राम

(लक्ष्मण से) चलो, भाई ।

लक्ष्मण

चलिये ।

[सब आश्रम की ओर चलते है ।

वाल्मीकि

देखिये रामचंद्र, वसन्त ने फूलों की लेखनी से वन के पत्ते-पत्ते पर आपके शुभागमन के गीत लिख दिये है ।

एक ऋषि

गुरुदेव का कथन यथार्थ है । राजर्षि राम के आगमन के संवाद के साथ ही साथ वन और आश्रम की दुनियाँ बदल गई है ।

दूसरा ऋषि

राजन्य राम धन्य हैं जिनके भाग्य की देवता भी ईर्ष्या करते हैं ।

राम

पूज्य महर्षियो ! यह आपकी अनुकंपा है । नहीं तो राम इस एक भी प्रशंसा का अधिकारी नहीं है ।

वाल्मीकि

महानुभाव, यह सामने यज्ञ की वेदी है । धूप-गंध

मिश्रित धूम वायु के प्रतिकूल आकर आपको अपना परिचय देना चाहता है ।

राम

आश्रम में कदम रखते ही यहाँ के मंत्र-पूत वातावरण का बोध होने लगा है ।

वाल्मीकि

इधर देखिये, इस लता-मंडप के नीचे ऋषि लोग तत्वालोचन करते हैं ।

राम

ज्ञानपीठ को इस पवित्र भूमि को नमस्कार करता हूँ।

[लक्ष्मण और सीता भी सिर झुकाते हैं ।

वाल्मीकि

महानुभाव, इस कुटिया मे पधारिये । इस ग्रंथागार मे मंत्रदृष्टा महर्षियो की संहिताएँ लिपिबद्ध करके सुरक्षित रक्खी गई हैं ।

राम

सरस्वती के इस मंदिर का दर्शन करके में जीवन को आज धन्य समझ रहा हूँ ।

वाल्मीकि

रामचंद्र, कुमार लक्ष्मण और राजवधू मैथिली के साथ इधर भी पधारिए । ये ऋषिपत्नियाँ आप महानुभावो का आतिथ्य करने को खड़ी हैं ।

राम

(आगे बढ़कर) देवियों की कृपा के लिए अनुगृहीत हूं ।

[सब सिर झुकाते हैं । ऋषि-
पत्नियाँ आशीर्वाद देती हैं ।

वाल्मीकि

रामचंद्र, वत्स ! अब बताइये आपके विश्राम का कहाँ प्रबंध करें ?

राम

ऋषिवर ! आश्रम मे ठहर कर हम महर्षियो की असुविधा को बढ़ाना नहीं चाहते । हम आगे जाकर विश्राम करेंगे । परन्तु यहीं कहीं निकट ही कुछ ठहरने का विचार है । इसके लिए आप ही बताइये कौन-सा स्थान ठीक रहेगा ? स्थान ऐसा हो,जहाँ ऋषि-महर्षियो की तपश्चर्या मे बाधा न पड़े ।

वाल्मीकि

रामचंद्र, इसीलिए तो आप धन्य हैं । इसीलिए तो आप से आगे आगे आपका यश चलता है ।

राम

तो बताइये, महर्षि ।

वाल्मीकि

राम, आप सब जानते हैं,। आप क्या नहीं जानते ? तो भी मुझसे पूछते हैं—मुझे आदर देते हैं । तो सुनो मेरी

समझ में चित्रकूट सबसे सुन्दर स्थान है। वहाँ महर्षि अत्रि के आश्रम के पास, पर्वत और सरिता के अंचल में बिता सको तो कुछ दिन अवश्य बिताना।

राम

धन्यवाद पूज्यवर !–अब आज्ञा दीजिये। हम लोग प्रस्थान करें।

वाल्मीकि

किस प्रकार कहूँ, राजकुमार !

[राम, सीता और लक्ष्मण नमस्कार करके विदा लेते हैं।

सीता

इस आश्रम को छोड़ते मेरा हृदय दुखी हो रहा है। इतनी जल्दी पितृगृह जैसा मोह इससे हो गया है।

राम

प्रिये, महर्षि वाल्मीकि का हम लोगों पर पिता तुल्य ही प्रेम है।

[आश्रम से बाहर निकल आते हैं।

सीता

(पीछे मुड़कर महर्षि वाल्मीकि के आश्रम को मैं प्रणाम करती हूँ। वह दिन कब होगा जब बनवास की अवधि बीतने पर एक बार यहाँ फिर आऊँगी !

[आँखों से आँसू पोंछती हुई राम के पीछे-पीछे चलती हैं।

पर्दा

तापसी

अयोध्या के राजप्रासाद का अन्तःपुर

सायंकाल

झरोखे में उर्मिला बैठी है। अपनी लंबी वेणी को बाँयें कंधे से सामने की ओर हाथ में लिए गुनगुना रही है। आँखें सजल हैं। कंठ गीला है। झरोखे के नीचे सरयू कलकल करती बहती जा रही है।

उर्मिला

जिस वेणी को गूँथ गये वे
उसको कैसे खोलूँ री!
रस मानस मे घोल गये वे,
उसमे विष क्यों घोलूँ री!

[चित्रा धीरे धीरे आती है। दीवार पर कोहनी का सहारा देकर खड़ी हो जाती है। उर्मिला गुनगुनाना बंद करके चित्रा की ओर देखती है।

चित्रा

माता सुमित्रा के मंदिर में दीपक अभी सँजोया नहीं गया।

उर्मिला

यह तो मेरा ही काम है।

चित्रा

अभी तो मैं आई हूँ।

उर्मिला

मैं चल रही हूँ। माताजी ने इन कामों में लगाकर मेरा कितना उपकार किया है। इतने समय मैं अपने दुख को भूली रहती हूँ। इनमें मुझे संतोष और आनन्द भी मिलता है। इनके साथ अनेक मीठी स्मृतियाँ जुड़ी हुई हैं। ओह ! (आह भरती है।)

चित्रा

(सजल आँखें एक ओर करके अनमुनी करती है।)

उर्मिला

एक दिन इसी समय, इसी जगह, बैठी मैं सरयू की लहरों की छवि देख रही थी। वे भागते हुए आये और माँ सुमित्रा के मन्दिर में मुझे ले जाकर खड़ा कर दिया। मैंने कुछ खीझकर पूछा—क्यों, क्या बात है ? बोले—दीपक सँजोने में देर हो जाने से दासियों की जो भर्त्सना हो रही है उससे बेचारियों को बचाने के लिए।

चित्रा

फिर ?

उर्मिला

मैंने पूछा—कैसे ! उत्तर में मेरी ठोढ़ी हाथ से उठाकर बोले—इस चन्द्रमा के उजाले में दीपकों को भला कौन पूछेगा ? (आह भरकर) विनोद की वे घड़ियाँ सखी, आज भुलाये नहीं भूलती हैं।

ही महनीय हो उठूं । आंखों से एक बूंद गिराये बिना सब कुछ हँसते-हँसते सह लूं । हाय, पर क्या मैं वैसा कर पाती हूँ ? एकान्त होते ही जी भीतर से उमड़ उठता सूखी आँखे लहराने लगती हैं ।

श्रुतिकीर्ति

क्या हर्ज है । यह तो उस महान व्यथा को सहन की भूमिका है । आँसुओं से धुलकर त्याग की गाथा पवित्र होती है ।

उर्मिला

श्रुतिकीर्ति ! बहन । तुम्हारी बाते हृदय पर शीतल लेप का काम देती हैं । तुम थोड़ी देर यहीं रहो ।

श्रुतिकीर्ति

अच्छी बात है । तो मैं दासी को मॅझली जीजी के पास भेज दूँ ।

उर्मिला

क्यों ?

श्रुतिकीर्ति

नंदीग्राम मे ही पादुका-पूजन और वहीं से राज-सञ्चालन होगा । जीजी भी वहीं रहेंगी । उनके पहिनने के लिए वल्कल चाहिए ।

उर्मिला

तो जाओ बहन पहले वह काम करो ।

उर्मिला

जीजी !

(आंखों से आंसू गिराती है।)

माण्डवी

(पास आकर अपने अंचल से उर्मिला के आंसू पोंछते हुए) छि: रोती हो बहन ! जीजी सीता को देखो। हँसते-हँसते माथे का मुकुट मेरे सिर पर रख कर चली गई।

उर्मिला

ये राजसी वल्कल तुम्हें कितने फबते हैं जीजी ! आह क्या हम सब बहनों का भाग्य एक ही सांचे में ढला है ?

माण्डवी

यह तो ठीक ही है। विधाता हमें एक दूसरे से ईर्षा करने देना नहीं चाहता।

उर्मिला

यह उसकी कृपा है।

माण्डवी

चित्रा, बहिन उर्मिला की देखरेख तुम पर है। मुझे तो नये कर्तव्य मे जाकर लगना है।

चित्रा

आप चिन्ता न करें।

माण्डवी

(उर्मिला को छाती से लगाकर) बहन, मैं जाती हूँ।

उर्मिला

जीजी !

(आंखों से आंसू गिराती है।)

मांडवी

(पास आकर अपने अंचल से उर्मिला के आंसू पोंछते हुए) छिः रोती हो बहन। जीजी सीता को देखो। हँसते-हँसते माथे का मुकुट मेरे सिर पर रख कर चली गई।

उर्मिला

ये राजसी वल्कल तुम्हें कितने फबते है जीजी! आह क्या हम सब बहनो का भाग्य एक ही सांचे मे ढला है ?

मांडवी

यह तो ठीक ही है। विधाता हमें एक दूसरी से ईर्षा करने देना नहीं चाहता।

उर्मिला

यह उसकी कृपा है।

मांडवी

चित्रा, बहिन उर्मिला की देखरेख तुम पर है। मुझे तो नये कर्तव्य मे जाकर लगना है।

चित्रा

आप चिन्ता न करें।

मांडवी

(उर्मिला को छाती से लगाकर) बहन, मैं जाती हूँ।

श्रुतिकीर्ति

जीजी, माँ सरयू स्नान को जा रही हैं, चलोगी ?

उर्मिला

सरयू-स्नान को ?

श्रुतिकीर्ति

हाँ ।

उर्मिला

और कौन-कौन चल रहा है ?

श्रुतिकीर्ति

देवी अरुन्धती, बड़ी माँ, मझली माँ सभी तो हैं ।

उर्मिला

मेरा चलना जरूरी है, बहन ?

श्रुतिकीर्ति

इच्छा हो तो चलो । जी कुछ बहल जायगा ।

उर्मिला

जी बहल जाय इसीलिए तो मैं चलना नहीं चाहती ।—
इस जी को बहलाने की अब इच्छा नहीं होती बहिन ।

श्रुतिकीर्ति

जाने दो, मै भी न जाऊँगी ।

उर्मिला

नहीं, तुम जाओ । मेरे लिए तुम तपस्विनी बनी जा
रही हो ?

उसे रात-दिन हृदय से लगाए रहूँ । वे जब लौटकर आयें तो उन्हें ही पहना दूं ।

चित्रा

(सजल नयन हो रहती है)

उर्मिला

तुम कुछ बताती नहीं, सखी ।

चित्रा

(फीका विवश हास्य) क्या बताऊँ ?

उर्मिला

बताओ कि प्रिय के साथ मैं जहाँ-जहाँ हँसी-खेली थी क्या वहाँ जाने से यह जी बहल सकेगा ? हृदय में जो सागर भर रहा है उसे बहा देकर क्या मुझे शांति मिलेगी ?

चित्रा

उन बातों को कुछ दिन सोचो ही न ।

उर्मिला

यह कैसे संभव हो बहिन ? इस झरोखे के नीचे ही तो सरयू बहती है उसे आँखें रहते कैसे न देखूँ ? मंदिरों की आरती और घंटा-ध्वनि कैसे बन्द करा देने को कहूँ ? इस चाँदनी को यहाँ फैलने से कैसे रोकूँ ? हृदय में जो कोयल कूक रही है उसे कैसे बरजूँ ? यह [illegible] नो आने बिना नहीं रह सकता । ऐसी कौन-सी वस्तु है जो

उर्मिला

यह तो ठीक न होगा बहिन ! मैं नही चाहती कि वे मेरी धरोहर की सुरक्षा मे अपने कर्तव्य को भूल जाँय। वे चाहे मेरी किसी भी वस्तु को न लाये पर अपनी साधना से विरक्त न हो। जेठ और जीजी की सेवा का उनका व्रत पूरा हो!

चित्रा

तुम्हारे इस पुनीत विचार के बल पर ही तो वे दोनो की सिद्धि कर सकेगे।

उर्मिला

कहीं सचमुच सखी उन्हे मेरा ध्यान रहा तो एकान्त वनवास के दिन उन्हे कैसे कटेगे ? हाय, कहीं मेरी ही तरह उनकी आँखे दिन-रात आँसुओ से लहराती हो तो यह सारा प्रयास व्यर्थ हुआ।

चित्रा

बहुत संभव है।— अपने प्रियजनो के सुख दुख का असर तो हृदय पर पड़े बिना नहीं रहता।

उर्मिला

अरे, क्या सच कहती हो ? मै ऐसा कभी न होने दूंगी। अपने हृदय को कुचल डालूंगी। आँसुओ को सुखा दूंगी। जिसके दर्शन से रुलाई आती है उसे लेकर अट्टहास करूँगी।— वे सुखी रहें। अपना व्रत पूरी तरह निभायें। बहिन श्रुतिकीर्ति से कह दो मैं भी सरयू-स्नान को चलूंगी।

भी उसी को जीवन का मंत्र बनाऊँगी । माँ, आज से सारे काम मुझे सौंप दो । बड़ी माँ, मझली माँ तथा आपके मंदिर के किसी काम के लिए किसी को कष्ट देने की आवश्यकता नहीं । परिजन, पुरजन, प्रजाजन सबके दुख-सुख मे आज से मेरा भाग होगा । मेरी सेवा से मा अब कोई वंचित न होने पावेगा ।

सुमित्रा

बेटी, तुम्हारे निश्चय से मुझे परम संतोष है । अब मैं सुख की नींद सो सकूंगी ।

[सुमित्रा का प्रस्थान

उर्मिला

मां, कितनी कोमल है परन्तु कितनी दृढ़ और उदार हैं । भगवान् सभी को ऐसी सास दें ।

[[illegible]

[illegible]

(साश्चर्य) ओह । [illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

उर्मिला

इस आनन्द-मुहूर्त में मैं जरूर गाऊँगी ।

[श्रुतिकीर्ति का आना

श्रुतिकीर्ति

जीजी, गाओ । बहुत दिनो के बाद मैं भी सुनूं । बचपन मे भूलों और फूलों के साथ कितना गाया था ! कैसे मीठे थे वे दिन !

उर्मिला

सुनोगी, सुनो । (गाती है)

सब शूल मार्ग के फूल बनो,
कंकड़-कुश-बाधा धूल बनो ।
जिस पथ जायें वे पथचारी,
वे गिरि-गह्वर अनुकूल बनो ।
सब शूल मार्ग के फूल बनो ।

आवाज गूँजती है । श्रुतिकीर्ति और चित्रा स्तब्ध होकर सुनती हैं ।

पर्दा

पंचवटी

नट

राम — अयोध्या के महाराज

वासंती — एक वनवासिनी, सीता की सखी

गोदावरी-तट पर जनस्थान

दिन का पहला पहर

आकाश से विमान उतरता है। विमान पर महाराज रामचन्द्र बैठे दिखाई देते हैं। धीरे धीरे विमान पृथ्वी पर आ जाता है। राम विमान से उतरते और इधर उधर देखते हैं।

राम

यही तो वह स्थान है। मेरे जीवन का सबसे पुण्य तीर्थ। यज्ञ की दीक्षा लेने से पूर्व तीर्थ-स्नान का गुरु वशिष्ठ का आदेश है। मैं समस्त तीर्थों का स्नान कर आया तो भी अन्तर की ज्वाला तो वैसी ही जग रही है। रोम-रोम फुँका जा रहा है। अपने इस पावन तीर्थ में स्नान किये विना उससे क्या कभी निस्तार हो सकता है? (इधर उधर टहलते हैं) आह, यहाँ का वातावरण कैसा शीतल है। लगता है, जैसे कोई कपूर और चंदन छिड़क रहा हो। [वासन्ती का प्रवेश

वासन्ती

महानुभाव, आप कौन हैं?

राम

(सुन नहीं पाते हैं) यहाँ क्षण भर में ही मानो शान्ति-सुख का अनुभव करने लगे हैं।

वासंती

(और पास आकर) महानुभाव, आप कौन हैं ?

राम

(देखकर) वासंती !

वासंती

(चकित होकर ।) आप तो मुझे जानते हैं !

राम

वासंती !

वासंती

आपकी आवाज तो पहचानी हुई-सी है । आ
कौन हैं, देव ?

राम

तुम्हीं बताओ मैं कौन हूँ, वासंती !

वासंती

(सोचती है) महानुभाव, याद नहीं पड़ता । कहीं आपक
देखा अवश्य है ।

राम

हाय, वासंती ! आज तुम मुझे पहचान भी नहीं प
रही हो । मैं इतना बदल गया हूँ !

वासंती

मैं सोच रही हूँ । मुझे क्षमा करो, महानुभाव !

राम

नहीं वासंती. तुम मुझे क्षमा करो। मैने तुम्हारा अपराध किया है। मैने तुम्हारी साध्वी सखी को निकाल दिया है। संसार जिसका नाम लेकर पवित्र होता है मैने उस देवी को कलंक लगाया है। वासती. तुम मुझे नहीं पहचान रही हो सो ठीक कर रही हो। मै, पापी राम इसी योग्य हूँ।

वासती

(केवल अंतिम वाक्य पर ध्यान दे पाती है और आश्चर्य चकित होती है।) रामचंद्र—आप रामचंद्र हैं। मेरी प्यारी सखी सीता के स्वामी रामचंद्र हैं !

राम

वासन्ती मुझ पापी को उस देवी के साथ याद मत करो।

वासंती

(सुनती नहीं है) अरे कहाँ गया आपका वह दिव्य रूप? आप तो बिल्कुल पहचाने नहीं जाते। न वह कान्ति, न वह शोभा न वह बल—आह ! आपका शरीर तो एक दम काँटा हो गया है।

राम

यह कुछ नहीं है वासती। यह मेरे पाप का एकांश भी प्रायश्चित नहीं है।

वासन्ती

कैसा पाप ? आपने कौन-सा पाप किया ?

राम

तुमने ध्यान नहीं दिया । तुमने सुना नहीं, वासन्ती ! मैंने तुम्हारी सीता को त्याग दिया है ।

वासन्ती

(स्तब्ध होकर) आप क्या कह रहे हैं ? सीता को त्याग दिया है ? श्री और शोभा की उस मूर्ति को त्याग दिया है !

राम

हाँ ।

वासन्ती

(स्तब्ध होकर रहती है । उसकी आवाज नहीं निकलती है ।)

राम

चुप क्यों होगईं, वासंती ? मुझे धिक्कारो न ।

वासंती

आप कहते हैं, आपने सीता को त्याग दिया है ?

राम

हाँ, मैं यही कहता हूँ ।

वासंती

किस अपराध पर ?

राम

अयोध्या के महाराज राम एक असती को घर कैसे रख सकते थे ?—बोलो ।

वासती

क्या कहा ? सीता असती ! संसार मे पवित्रता का आदर्श स्थापित करनेवाली सीता असती !—नहीं, कभी नहीं। आपको भ्रम हुआ होगा, महाराज !

राम

देवि तुम ठीक कहती हो ।

वासती

क्या ठीक कहती हूँ ?

राम

सीता कभी असती नहीं हो सकती । वह यज्ञ-धूम की तरह पवित्र है ।

वासंती

परन्तु आप तो अभी कुछ और कह रहे थे ।

राम

वासती, देवी । तुम नहीं जानती । तुम वनवासिनी हो। तुम भोली हो ।— अगर तुम जान पाती कि राम के दो रूप है ।

वासती

क्या कह रहे है महाराज !

राम

देवी मैं कह रहा हूँ मेरे दो रूप हैं। एक रूप मे मैं महाराज हूँ। दूसरे रूप मे मैं रामचन्द्र हूँ। पहले रूप मे मैंने सीता को असती माना है। कलंकित माना है। उसे त्याग दिया है। घनघोर वन मे, हिंस्र पशुओं का भोजन बनने को उसे छोड़ दिया है। दूसरे रूप में मैं उसकी आराधना करता हूँ। मैं उसे निरपराधिनी मानता हूँ। उसके लिए रात-दिन रोता हूँ। स्वप्न मे उससे मिलने के लिए छटपटाता हूँ। उसकी एक झलक पाने के लिए अपना सर्वस्व छोड़ सकता हूँ। उसकी याद मे शरीर का खून सुखा दिया है।

वासती

मैं कुछ नहीं समझती, महाराज।

राम

राजा के पास हृदय नही होता, न्यायदंड होता है। उसके आँखें नहीं होतीं, कान होते हैं।

वासंती

मैं नहीं समझती महाराज।

राम

महाराज के कर्तव्य का मैंने पालन किया है। प्रजा में अपवाद फैल रहा था कि सीता पर-पुरुष के यहाँ रहकर आई है! सूर्यवंशी महाराज राम ने उसे ग्रहण कर लिया है!— कितना बड़ा अपवाद था! कैसा भयानक कलंक था? कोई राजवंश उसे सह सकता था?

वासंती

और आपने उस पर विश्वास कर लिया ?

राम

मैंने नहीं देवि महाराज राम ने विश्वास कर लिया। महाराज प्रजा की बात पर अविश्वास कैसे कर सकते थे ?

वासंती

महाराज कोई दूसरे हैं क्या ? क्या आप अयोध्या के महाराज नहीं हैं ?

राम

मैंने अभी कहा था न वासंती, कि जबसे मैं महाराज बन गया हूँ। तब से मेरे दो रूप होगये हैं। हर एक बात का निर्णय मुझे महाराज की पद-मर्यादा के ध्यान से करना पड़ता है। राम की राय एक व्यक्ति की राय है! उसे वहाँ कोई नहीं पूछता देवि।

वासंती

तो आप कैसे महाराज हैं ? आप जानते हुए भी सचाई का समर्थन नहीं कर सकते ?

राम

हाय, मैं तुम्हें कैसे समझाऊँ देवि, कि लोकेच्छा के सिवा राजा की अपनी कोई सम्मति नहीं होती।

वासंती

तब तो आपकी स्थिति बड़ी दयनीय है।

राम

वासंती, तुम मुझ पर क्रोध नहीं करती । मैंने निरपराधिनी सखी को त्याग दिया है यह जानकर क्रोध नहीं करतीं ?

वासंती

पहले क्षोभ का एक भाव उठा था जरूर पर अब बिलकुल नहीं रहा ।

राम

तुम्हे मेरे ऊपर जरा भी क्रोध नहीं ? तुमने मेरे को क्षमा कर दिया ?— बोलो, बोलो ।

वासंती

मेरे मन मे महाराज को निरीहता पर दया है । आपके चेहरे से व्यक्त होता है कि आप कितनी मनोवेदना लिये घूमते हैं ?

राम

वासंती, देवि !

वासंती

महाराज प्रायश्चित की अंतर्ज्वाला ने तिल-तिल आपको सुखा दिया है ।

राम

उस पाप की गुरुता के सामने यह कुछ नहीं है, वास

वासंती

राम

क्या कहा वासंती, यह पाप नहीं है ? अरे ! यह पाप नहीं है। सीता को कलंकिनी बताना पाप नहीं हैं ?

वासती

जब आप जानते है सीता पवित्र है। जब आप अपवाद पर विश्वास नहीं करते। जब आप अपनी भूल के लिए दुखी हैं। जब आपने केवल राजकीय कर्तव्य का पालन किया है। जब आप लाचार थे। जब आपने सीता के साथ साथ अपने हृदय की शाति को भी त्याग दिया है। जब आपने सीता को त्यागकर न्याय-दंड का अपने ऊपर ही प्रहार किया है तब उसे पाप कहना कठिन है।

राम

तो इसे क्या कहोगी, वासंती ? इसे राम का पुण्य कहोगी ? इसे राजधर्म कहोगी ?— कहो जो चाहो कहो। आज राम अयोध्या के महाराज हैं ? उनके मुँह पर उनके कृत्य को पाप कहने का साहस कौन करेगा ? राजकोप को भला कौन निमंत्रण देगा ? एक अबला के लिए जिसका अस्तित्व कौन जाने दुनियाँ में शेष है या नहीं, राजा की निंदा करना कोई न चाहेगा।

वासती

यह सब कहो महाराज। वनवासिनी वासंती का हृदय बाहर से शतधा हो गया दिखाई नहीं देता इससे यह

न समझो कि वह सखी सीता के लिए दुखी नहीं है। मैथिली के दुर्भाग्य के लिए मेरा रोम-रोम रो रहा है। उस देवी को घोर विपत्ति में डालनेवाले के लिए मेरे अन्तर का ज्वालामुखी अभिशापों की वर्षा कर उसे जला डालना चाहता है—

राम

वह नारकी इसी योग्य है, वासती !

वासती

परन्तु—

राम

परन्तु-वरन्तु नहीं वासंती ! अभिशाप दो, उसे कोसो। परमात्मा से मनाओ कि उसके जन्म-जन्मान्तर की शान्ति उससे छीन ले।

वासती

क्यों नहीं महाराज ?—मैं जानती हूँ सखी जानकी के साथ कितना अनर्थ हुआ है। उन्हे अकल्पनीय दुखों मे भी पड़ना पड़ा होगा, परन्तु जब देखती हूँ कि महाराज ने उन्हे दंड देकर अपने को ही सबसे अधिक दंड दिया है, तब जी मे आपके प्रति सहानुभूति ही होती है। क्रोध गल जाता है, करुणा उमड़ती है।—मुझे विश्वास है, मेरी सखी भी यदि आपको इस दशा मे देख पाये तो उसे रुलाई ही आयेगी।

राम

क्या कहा ! सीता मुझे क्षमा कर देगी ?—सचमुच वासंती वह देवी मुझे अवश्य क्षमा कर देगी । उसके साथ मैं इससे अधिक अन्याय करूँ तो भी वह क्रोध न करेगी ।

वासंती

महाराज, मेरी सखी के शील-स्वभाव से परिचित हैं ।

राम

ऐसा मत कहो वासंती । यदि स्वार्थी राम शील-स्वभाव की कद्र जानता, यदि प्रेम का उसके निकट कुछ भी मूल्य होता, तो वह सिंहासन त्याग देता परन्तु सीता को कलंकिनी कहकर निर्वासित न करता । राम को यश जितना प्यारा है प्रेम उतना नहीं । उसकी दृष्टि मे मर्यादा सीता से अधिक सुन्दरी है ।

वासंती

तभी तो सुनती हूँ कि अश्वमेध यज्ञ मे सहधर्मिणी के स्थान के लिए आपने मेरी सखी की स्वर्ण-प्रतिमा बनवाई है ।

(चुप रहते हैं ।)

राम

चुप कैसे हो रहे महाराज !—क्या यह आपके हृदय का पर्याप्त प्रमाण नहीं है ? और प्रमाण की जरूरत भी क्या ? आपका चेहरा पुकार पुकार कर कह रहा है कि

अपने ऊपर कितना अत्याचार करके आपने अपनी प्रिया को अपने से दूर किया है ।

राम

बस करो वासंती ! बस करो । ओफ़—अब उस बात की याद मत दिलाओ ।

वासंती

(प्रसंग बदलने की इच्छा से) सुनती थी आप यज्ञ की दीक्षा ले रहे हैं, फिर आप यहाँ जनस्थान में कैसे आ गये ?

राम

जनस्थान में आये बिना राम का कोई यज्ञ क्या कभी पूरा हो सकता है ?

वासंती

आप अकेले ही आये हैं ? कुमार लक्ष्मण को साथ नहीं लाये हैं ?

राम

अकेला ही आया हूँ, परन्तु मेरी बात का उत्तर तो दो, वासंती ।

वासंती

किस बात का ?

राम

यही कि गोदावरी के तट पर जनस्थान और पंचवटी के दर्शन किये बिना क्या राम का कोई यज्ञ पूर्ण हो सकता

है ? यह राम के जीवन का सब से बड़ा पुण्यतीर्थ है जहाँ प्रिया जानकी के साथ जीवन के सब से सुन्दर वर्ष बिताये थे । तुम्हे याद हैं न वासंती वे दिन जब यहीं कहीं अपने हाथो से मैथिली मृगछौनो को हरी-हरी दूब खिलाती थी, गोदावरी से जल ला-लाकर अपने लगाये पौधो को सींचती थी. वन-फूलों की मालाएँ गूंथ-गूँथ कर मुझे पहनाती थी ।—बोलो, याद है या भूल गई ?

(रोती है ।)

राम

रोओ मत. वासती । धीरज धरो और मेरी सहायता करो । यज्ञ की दीक्षा लेने का मुहूर्त निकट है । तुम्हारी सहायता से मै जनस्थान और पंचवटी के दर्शन करना चाहता हूँ । मैं अशक्त हो रहा हूँ । मै अशान्त हो रहा हूँ । मुझे सहारा देकर ले चलो, देवी ।

वासती

(आंसू पोंछकर) आइये, महाराज ।

[राम को हाथ का सहारा देती है और दोनों धीरे धीरे चलते है । दृश्य बदलता जा रहा है।

राम

वासंती. कितने वर्ष बीत गये, परन्तु लगता है जैसे कल की बात हो । जैसे सीता अभी अभी किसी लता-मंडप से निकलकर आनेवाली हो ।

वासती

सखी सीता के साथ आप जिस जगह रह चुके हैं, वहाँ उनकी याद आना स्वाभाविक है ।

राम

अब जब प्रिया का सिर्फ नाम शेष रह गया है तब भी यहाँ उसके आसपास ही कहीं होने की प्रतीति होती है । सब जानते हुए भी जी यही कहता है कि मैं जाकर कुंजो की छाया मे से उसे खोज लाऊँ ।

वासती

(चलते-चलते एक लता-गृह दिखाकर) देखिये महाराज, यह वही लतागृह है जहाँ बहुत देर तक बैठकर आपने मेरी सखी की प्रतीक्षा की थी ।

राम

और वह गोदावरी से जल भरने गई थी ।

वासती

हाँ-हाँ ।

राम

परन्तु उड़ते हुए हंसो को देखने मे ऐसी रम गई थी कि मैं बैठा राह देख रहा हूँ यह उसे एक दम विसर गया था । जब लौटी थी तो अपराधिनी की भाँति हाथ बाँध कर मेरे सामने खड़ी हो गई थी ।

वासंती

यह देखकर आप हँस दिये थे ।—महाराज, तब आप का दंडविधान और ही तरह का था ।

राम

उस प्रसंग को फिर न छेड़ो वासन्ती ।

वासंती

(थोड़ा और आगे बढ़कर) लो महाराज, देखो सामने पंचवटी है ।

राम

वासंती देवि ! तुम्हे याद है प्रिया जानकी को यह स्थान कितना प्रिय था ? वह दिन कितना भाग्यवान था जब प्यारी वैदेही के साथ यहीं खडे होकर पहले पहल मैंने भगवती गोदावरी के दर्शन किये थे । आज मैं अकेला हूँ ।
(आँखो में आँसू भर लाते है ।)

वासंती

एक दिन फिर आप मेरी सखी के साथ यहाँ आयेंगे, महाराज !

राम

वासंती, क्या सचमुच वह दिन इसी जीवन मे फिर आयेगा ?

वासंती

आना तो चाहिए महाराज ।

राम

एक क्षण के लिए वासंती अगर वह सुख लौट आवे तो मुझे फिर और कुछ नहीं चाहिए । (गहरी साँस लेते है ।)

वासंती

(पहाड़ी तट पर जाकर) महाराज, भगवती गोदावरी की जलराशि देखिये ।

राम

अभागा राम भगवती गोदावरी को प्रणाम करता है ।

(हाथ जोड़ कर प्रणाम करते हैं ।)

वासंती

चलिये महाराज, सीता तीर्थ के दर्शन करें ।

राम

(चलते-चलते) वासंती, इधर देखो इन्हीं वृक्षों की छाया मे कहीं अपनी पर्णकुटी थी !

वासंती

पर्णकुटी के द्वार के सामनेवाला रसाल अब तक खड़ा है । इसी की छाया में मेरी सखी बैठ कर अपने मोर का नाच देखती थी ।

राम

इस स्फटिक शिला पर प्रिया के साथ कितनी बार वन की शोभा देखी थी । आज अकेले ही थोड़ी देर बैठ लूँ ?

[बैठते हैं ।

वासंती

महाराज, मेरी सखी ने जिन मृग-छौनों को लाड़-प्यार से पाला था, वे अब तक उसे भूले नहीं हैं । वे जब

तब यहाँ आ-आकर शिला को सूँघते और कुंजो मे उसे खोजते फिरते है ।

राम

वासंती, वे पशु-पक्षी धन्य है जो अपना प्रेम अब तक बनाये है । मुझसे तो वह भी न हुआ । उसके विश्वास का मैंने कैसा सुन्दर बदला दिया । (दुखी होते है ।)

वासती

महाराज, इस तरह दुखी होने से आप कैसे देख सकेगे ? यहाँ तो कण-कण मे आपको सखी मैथिली की स्मृतियाँ मिल जायेगी ।

राम

चलो, आगे चले । (उठकर चलते हैं ।)

[दृश्य बदलता जा रहा है ।

वासती

महाराज, आपको याद नहीं होगा एक बार इसी सघन कुंज मे आप कहीं छिप गये थे । मेरी सखी आपको खोजते-खोजते थक गई थी । कुमार लक्ष्मण पहले ही से कहीं गये थे ।

राम

याद है, याद है वासंती ।—मुझे न पाकर प्रिया डर कर मूर्छित हो गई थी । होश आने पर मुझे देखकर फिर

कितना रोई थी ।—मैं बड़ा निठुर हूँ । मैंने सदा उसके आँसुओं के साथ खिलवाड़ ही किया है !

वासंती

इधर आइये महाराज, आपको एक चीज दिखाऊँ । यह आपने पहले कभी न देखी होगी, परन्तु आपको एक शर्त करनी होगी ।

राम

वह क्या ?

वासंती

कि आप बिना रोये उसे देखेंगे ।

राम

वासंती, तुम समझती हो क्या मैं यो ही रोता हूँ ! सच जानो सखी, मैं अपने हृदय को भरसक रोकता हूँ । जब विवश हो जाता हूँ तभी—

वासंती

(सेंहुड़ के वृक्ष के पास जाकर) देखिये महाराज !

[राम आगे बढ़कर देखते है । वृक्ष के तने पर जहाँ तहाँ सुन्दर अक्षरों में राम नाम अंकित है । जो उभर आने से खूब स्पष्ट हो गया है ।

राम

इन अक्षरों से प्रिया का प्रेम? चू रहा है ।—हाय ! उसे मुझसे और मेरे नाम से कितना स्नेह था ?

वासंती

यह इधर चित्रकारी भी तो देखिये।

राम

फिर और क्या है? (घूमकर देखते हैं) अरे, यह तो धनुर्भंग का चित्र है। प्रिया दोनों हाथों से मेरे गले मे जयमाला डाल रही है। वासंती, सखी! मुझे क्षमा करना। यह दृश्य तो मुझ से देखा नहीं जाता। (रोते हैं।)

वासंती

(आँखों के आँसू पोंछकर) ये चित्र खींचकर मेरी सखी फिर अधिक दिनों यहाँ न रही थी। इस तरह तो ये याद में उभरे हैं।

राम

प्रिया जानकी के हाथ के ये चित्र प्रकृति ने कितनी सावधानी से सुरक्षित कर रक्खे हैं? मैंने उसी जानकी को अपने हाथों से दूर फेंक दिया।

वासंती

हाथों से दूर फेंक देने से क्या होता है। हृदय से तो नहीं फेंक सके हैं।

राम

वह मेरे वश की बात नहीं है वासंती। (रोते हैं।)

वासंती

मैंने यहाँ लाकर व्यर्थ महाराज का जी दुखाया। चलिये, अब आप थक गये होंगे। थोड़ा विश्राम कर लीजिये।

राम

वासंती, राम को इस जन्म में विश्राम कहाँ ? राम तो राजधर्म से बँधा है । यहाँ घूमते हुए भी क्षण-क्षण पर उसे अश्वमेध यज्ञ का ध्यान आ रहा है । इस दुष्ट राजधर्म ने ही प्राणप्रिया को मुझसे विलग करा दिया है । यही अब उसकी स्मृति के साथ अकेले में दो घड़ी हँसने और रोने भी नहीं देता ।

(व्याकुल होते हैं ।)

वासंती

तो महाराज बिना विश्राम किये ही चले जायेंगे ?

राम

हाँ, मैं अब चला जाऊँगा । मै अब अयोध्या का महाराज हूँ न ? मेरा समय बड़ा कीमती है । मैं उसे अपने रोने-धोने मे कैसे लगा सकता हूँ ?—परन्तु वासंती, तुम जिस तरह सीता को याद किये हुए हो, उसी तरह क्या इस अधम राम को भी याद रक्खोगी ?

वासंती

राम और सीता को मेरे जीवन से क्या कोई अलग कर सकता है ? मेरे निकट तो वे सदा साथ रहेंगे ।

राम

वासंती, तुम बड़ी पुण्यात्मा हो । तुम्हारा जीवन धन्य है । जब राम सीता के लिए तरसते हैं । जब उनमें न

जाने कितने जन्मो का अन्तर पड़ गया है तब तुम्हारे समीप वे दोनो एक हैं ।

वासंती

महाराज वे फिर एक होगे !—मेरा मन कहता है वे फिर मिलेंगे ।

राम

यहाँ से जाने से पहले अपनी इस दृढ़ आशा को मेरे मन मे भी भर दो वासंती ? यह पापी जीवन बहुत जल चुका है । अब इसे कुछ देर सुख से जीने लायक बना दो ?—बना दो, देवि ? (व्याकुलता का नाट्य करते है ।)

वासती

भगवान चाहेगे तो यही होगा ।—धीरज धरिये महाराज ।

[वासती हाथ के सहारे से रामचद्र को विमान पर चढ़ा देती है । राम रोते है । विमान धीरे-धीरे ऊपर उठता है । वासती पृथ्वी पर पछाड़ खाकर गिरती है ।

पर्दा